देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयताम्।। ऋ० १/८९/२

ISSN : 2395-7115
नवम्बर 2024
Vol.-20, Issue-5(1)

Impact Factor
7.523

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

वैश्वीकरण के दौर में बदलती सामाजिक व्यवस्था

Guru Nanak Girls College
Sant Pura, Yamuna Nagar

विशेषांक सम्पादक :
डॉ. गीतू खन्ना,
डॉ. अमनदीप कौर

सम्पादक :
डॉ. नरेश सिहाग
एडवोकेट

Publisher :
Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)
202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

स्व. चौ. गुगनराम सिहाग व उनकी छोटी बहन स्व. श्रीमती गीना देवी के शुभाशीर्वाद से प्रकाशित

JOURNAL OF HUMANITIES, COMMERECE, SCIENCE, MANAGEMENT & LAW

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Vol. 20 | ISSUE-5(1) | (नवम्बर 2024) | ISSN : 2395-7115

हरियाणा साहित्य एवं संस्कृत अकादमी, पंचकूला

एवम्

गुरु नानक गर्ल्स कॉलेज यमुनानगर

बहुविषयक एक दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी के शोध पत्र

अनुक्रमाणिका – नवम्बर 2024

क्र.	विषय	लेखक	पृष्ठ
1.	सम्पादकीय	डॉ. गीतू खन्ना, डॉ. अमनदीप कौर	11–11
2.	शुभकामना संदेश		12–15
3.	हिन्दी साहित्य में नारी चित्रण	डॉ. गीतू खन्ना	16–22
4.	वैश्वीकरण के दौर में भारतीय शिक्षा संस्कृति और साहित्य	डॉ. शक्ति बुद्विराजा	23–27
5.	वैश्वीकरण के दौर में साहित्य में चित्रित परिवर्तित होता पारिवारिक ढांचा	डॉ. अंजू बाला	28–35
6.	वैश्वीकरण का अवधारणात्मक विकास व महिला सशक्तिकरण	संदीप कौर	36–39
7.	वैश्वीकरण के दौर में विखंडित होते जीवन और मानवीय मूल्य : हिन्दी उपन्यासों के सन्दर्भ में	डॉ. अमनदीप कौर	40–45
8.	वैश्वीकरण के दौर में साहित्य में वर्णित वर्तमान भारतीय शिक्षा व्यवस्था	मिस दीपमाला	46–50
9.	वैश्वीकरणसमये वेदनिहितसामाजिकसिद्धान्तविचारः	अजित कुमार नायक	51–54
10.	साहित्य में वैश्वीकरण का प्रभाव : शरद जोशी और रवींद्रनाथ त्यागी के व्यंग्यात्मक दृष्टिकोण का विश्लेषण	अर्चना बारस्कर	55–60
11.	वैश्वीकरण के दौर में विखण्डित होते जीवन मूल्य 'गिलिगडु' उपन्यास के संदर्भ में	बीना मीणा	61–64
12.	वैश्वीकरण के दौर में दिविक रमेश के बाल कथा साहित्य में चित्रित बाल समस्याएं	दीपिका चौहान, डॉ. रीता सिंह	65–69
13.	वैश्वीकरण के दौर में साहित्य में वर्णित वर्तमान भारतीय शिक्षा व्यवस्था	धीरेंद्र प्रताप सिंह गौर	70–76
14.	The Impact of Technology on Mental Health of Young Adults : A Systematic Review	Ms. Divya Rathi, Dr. Nirupma Saini, Dr. Vandana Singh	77-84
15.	वैश्वीकरण के दौर में साहित्य में वर्णित वर्तमान भारतीय शिक्षा व्यवस्था	डॉ आदित्य प्रकाश	85–89
16.	वैश्वीकरण के दौर में साहित्य में वर्णित वर्तमान भारतीय शिक्षा व्यवस्था	डॉ. अमिता रेड्डू	90–97
17.	भूमण्डलीकरण और हिन्दी भाषा	डॉ० चन्द्रा खत्री, डॉ० आशा हर्बोला	98–100

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 7.523

Bohal Shodh Manjusha
Nov. 2024

ISSN : 2395-7115
Page No. : 40-45

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

वैश्वीकरण के दौर में साहित्य में विखंडित होते जीवन और मानवीय मूल्य : हिन्दी उपन्यासों के सन्दर्भ में

डॉ. अमनदीप कौर

सहायक प्रवक्ता, हिन्दी विभाग, गुरु नानक गर्ल्स कॉलेज, संतपुरा, यमुनानगर।

शोध सार :-

बीसवीं शताब्दी के अंतिम दशक तक साहित्य में भारतीय समाज और संस्कृति पूरे बदलाव के साथ अवतरित होता है, जिसमें 1991 में शुरू हुए उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण से पनपे बाजारवाद और उपभोक्तावाद इसके प्रमुख बिन्दु है, जिसने पूरी दुनियाँ को अपने बाजार के रूप में परिवर्तित कर दिया। नब्बे के दशक में जहां भारत आर्थिक विपन्नता के दौर से गुजर रहा था वहीं दूसरी ओर अमेरिका, चीन आदि विकसित देश महाशक्ति के रूप में उभर रहे थे, जो वैश्वीकरण की प्रक्रिया के तहत समस्त विश्व को एक ग्राम के रूप में स्थापित करने के लिए प्रयासरत थे। भारत ने भी स्वयं को इस व्यवस्था में एकीकृत कर दिया। भारत में वैश्वीकरण की इस प्रक्रिया के अनेक सकारात्मक और नकारात्मक प्रभाव देखे गये हैं। विश्व की सर्वोच्च शक्ति 'सुपर पॉवर' अमेरिका पूरे विश्व को अपने रूप में ढालकर सांस्कृतिक दृष्टि से अपना बनाने तथा आर्थिक दृष्टि से अपने स्वार्थों की संपूर्ति के लिए एक रंग में रंगने के संकल्प को कार्य रूप दे चुका है। यह वैश्वीकरण एक प्रकार से पूरी दुनियाँ का अमेरिकीकरण ही है जो सभी राष्ट्रों की स्थानीय संस्कृति, जातीय चेतना को पूरी तरह लील कर अपने रंग में रंग डालने की बड़ी भारी सफल कूटनीति है, जिसके कारण पूरा विश्व उसकी चेपट में आ चुका है।

प्रत्येक देश समाज से बनता है और साहित्य समाज का दर्पण कहलाता है। समाज में जो कुछ भी जिन भी परिस्थितियों में घटित हुआ वह साहित्य की किसी न किसी विधा में लेखनी में उतरा है। साहित्यकारों ने समाज के मर्म को लिखते हुए उसके बदलते स्वरूप को भी आत्मसात किया है। यह सर्वविदित है कि उपन्यास विधा अपने उद्‌भव से लेकर आज तक विकासमान विधा रही है, आज वैश्विक आर्थिक विचारधारा का प्रभाव साहित्य पर हु–ब–हु पड़ता दिख रहा हैं आज बाजारवादी व्यवस्था से हर कोई त्रस्त है। सारी ख्वाहिशों को पाश्चात्य संस्कृति के रंग में रंग डालने की इच्छा प्रबल होती जा रही है। भाव, संवेदना, प्रेम का स्वर अब आम लोगों के जीवन से अलग होता जा रहा है, उसके स्थान पर अब केवल पूँजी, पैसा, स्वार्थ ही प्रमुख हो गया है।

मोबाइल, इंटरनेट ही अब मनुष्य की दुनियाँ बन चुकी है। जिसमें सारे रिश्ते, नाते, संवेदना, संस्कार सब–का–सब तार–तार हो रहा है। जिसे हिन्दी उपन्यासकारों ने अपनी लेखनी से मुखरता प्रदान की है। हिन्दी

उपन्यासकारों ने वैश्वीकरण का प्रभाव भारतीय समाज व हिन्दी साहित्य में जिस रूप में पड़ा है, उसे सशक्त रुप से प्रस्तुत किया है।

बीज शब्द :- वैश्वीकरण, भूमंडलीकरण, बाजारवाद, जीवन मूल्य, मानवीय मूल्य, मानसिकता, उपन्यास।

प्रस्तावना :-

वैश्वीकरण का शाब्दिक अर्थ है – "स्थानीय या क्षेत्रीय वस्तुओं या घटनाओं के विश्व स्तर पर रूपांतरण की प्रक्रिया है। इसे एक ऐसी प्रक्रिया का वर्णन करने के लिए भी प्रयुक्त किया जा सकता है जिसके द्वारा पूरे विश्व के लोग मिलकर एक समाज बनाते हैं तथा एक साथ कार्य करते हैं। यह प्रक्रिया आर्थिक, तकनीकी, सामाजिक और राजनीतिक ताकतों का एक संयोजन है।"[1] वैश्वीकरण शब्द अंग्रेजी के ग्लोबलाइजेशन का हिंदी रूपांतरण है। ग्लोबलाइजेशन के लिए हिंदी में भूमंडलीकरण शब्द का प्रयोग किया जाता है, भूमंडलीकरण शब्द का अर्थ है – 'भू' अर्थात भूमि और 'मंडलीकरण' का अर्थ है – समाहित करना। भूमंडलीकरण व्यापक विषयक नियमों की वैश्विक एकता के लिए लाई गई प्रक्रिया है, जो विश्व के लोग, कंपनियां तथा विविध राष्ट्रों की सरकारों को एक ही व्यापार विषयक नियमावली में बांधने का कार्य करती है।

भारत देश में 20वीं सदी के अंतिम दशक में उत्तर आधुनिकतावाद जैसी अवधारणा के माध्यम से वैश्वीकरण और बाजारवाद की संकल्पना अत्यधिक तेजी से उभर कर सामने आती है। इस बाजारवाद का प्रभाव समाज, अर्थनीति और राजनीति पर पड़ने के साथ ही साथ साहित्य पर भी दिखाई पड़ता है। आज बाजारवाद ने पूरे समाज को 'जीन्स' में परिवर्तित कर दिया है। इस भूमंडलीकृत व्यवस्था में हर वस्तु बिकने के लिए तैयार है और हर व्यक्ति खरीददार के रूप में सामने आता है। वैश्वीकरण ने मनुष्य जीवन को सहज और सरल बनाया तो दूसरी ओर मनुष्य की मानसिकता को विकृत और विक्षिप्त भी बनाया। वैश्वीकरण के कारण भौतिक साधनों का प्राबल्य, आर्थिक संपन्नता, सुविधाओं की भरमार, वैश्विक मूल्यों की स्थापना, अधिकारों के प्रति सचेतता, रोजगार निर्मिती एवं वैश्विक दूरियों को मिटाने में सहजता आई तो दूसरी ओर मनुष्य को स्वार्थी, विकृत, संकुचित, वासनांध, क्रूर एवं पशु भी बना दिया है। मनुष्य को भौतिक सुख सुविधाओं का गुलाम बनाने में तथा मनुष्य की सोच को विकृत बनाने में वैश्वीकरण ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। समाज और मानव के बदलते मूल्य तथा विकृत, घृणित एवं संकुचित मानसिकता का हिंदी उपन्यास साहित्य में चित्रण किया गया है। वैश्वीकरण के दुष्प्रभावों को लेकर समस्त देशों के संस्कृतिकर्मी साहित्यकार चिंतित हैं इस बारे में ज्योतिष जोशी लिखते हैं :– "उपन्यास अपने समय की नैतिकता से दूर नहीं हो सकता। उपन्यासकार अगर नैतिक समस्याओं से आंखें चुराता है तो मानना चाहिए कि वह अपने दायित्व से मुंह मोड़ रहा है।"[2]

वर्तमान युग वैश्वीकरण का युग है और वैश्वीकरण के इस युग में प्रायरू लेखक और पाठक 'वेबसाइट रीडर' बनते चले गए हैं, इसलिए इनका पठन पाठन भी पल्लवग्राही है, गहराई की इसमें कोई भूमिका नहीं है। लेखक के लिए भी और शायद पाठक के लिए भी।

वैश्वीकरण का बहुत ही पीड़ादायी उदाहरण हमें भगवतीचरण वर्मा के 'आखिरी दांव' उपन्यास में मिलता है। प्रस्तुत उपन्यास में मनुष्य की स्वार्थी वृत्ति एवं कामवासना तृप्ति से उपजी निचता का चित्रण किया गया है। उपन्यास का पात्र रामेश्वर पैसों के लिए नाजायज तरीके अपनाता है। वह कहता है "दुनिया में केवल एक परमेश्वर है – पैसा। उससे भागकर हम लोग जा ही कहां सकते हैं? हर जगह पैसा स्वामी है, पैसा शक्ति है।"[3]

इसी प्रकार चमेली भी पारिवारिक प्रताड़ना को नकारते हुए रतन सुनार के साथ भाग जाती है, रतन चमेली से प्रेम नहीं करता, वह तो उसके धन और शरीर को भोगना चाहता है। वह नशे की लत के कारण चमेली के जेवर बेच देता है। जुआ और शराब का आदी रतन चमेली को भी सेठ हीरालाल को बेचने को तैयार हो जाता है। रतन पैसों के लिए अंधा हो जाता है। वैश्वीकरण से उपजी अर्थ केंद्रित मानसिकता ने मनुष्य को स्वार्थी और लोभी बना दिया है। वह पैसों के लिए नीचता की सारी हदें लांघ रहा है, पैसे ने सारे रिश्तों को तोड़ दिया है। जमीन और पैसों के लिए भाई अपने भाई का, बेटा अपने बाप का और पति अपनी पत्नी का वध करने के लिए भी लालायित है।

वैश्वीकरण के कारण मनुष्य यंत्र के समान संवेदनहीन बन गया है। अर्थ केंद्रित व्यवस्था ने मनुष्य की सोच और चरित्र को बौना बना दिया है। मनुष्य से अधिक महत्व भौतिक साधनों को दिया जा रहा है, जिसे पाने की लालसा के कारण मानव मनोरुग्ण बन रहा है। सुबह से लेकर रात तक पैसों के पीछे भाग रहा है। परिवार, रिश्ते – नाते सब कुछ भुलकर वह अंधी दौड़ का हिस्सा बन रहा है। अशांति, असामंजस्य अब मानव की प्रवृत्ति बन गई है। महानगरों ने मानव को कठोर, भावहीन एवं खोखला बना दिया है। "महानगरों में जीविका और आवास की समस्या में उलझकर व्यक्ति स्वयं को ही भूल बैठा है। तकनीकी अर्थव्यवस्था एवं भीड़ की राजनीति ने मानवीय संबंधों को मृतप्राय कर दिया है। नगरीय जीवन के तनाव एवं संघर्ष ने व्यक्ति को मानसिक रोगी बना दिया है।"[4]

मनुष्य की अर्थपिपासु वृत्ति और वासनांध मानसिकता को शैलेश मटियानी ने 'कबूतरनामा' उपन्यास में चित्रित किया है। सुखी दाम्पत्य जीवन का आधार पति–पत्नी में विश्वास, सामंजस्य, समर्पण और सच्चा प्रेम होता है, परंतु उपभोगी मानसिकता ने पति–पत्नी के रिश्ते को खोखला और विक्षिप्त बना दिया है। मुक्त यौन संबंधों की मानसिकता ने भारतीय सुखी परिवारों के दरवाजे पर दस्तक दी है, जिसके कारण उदात्त मानवीय मूल्य तार–तार हो गए हैं। आज रिश्ते और परिवार बिखर रहे हैं। सच्चे प्रेम में जहां त्याग होता है, वहीं वासना में स्वार्थ और लालसा होती है। उपन्यास का पात्र सेठ करसन भाई अपनी पत्नी यशोदा बेन से संबंध रखने की बजाए शकुंतला बाई और दातुन बेचने वालियों से संबंध रखता है और पति द्वारा प्रताड़ित यशोदा बेन घर के नौकर रामा से अपनी दैहिक भूख मिटाती है। कामवासना और अर्थवासना में अंधी हो चुकी शारदा, दन्तुभाऊ के साथ मिलकर सेठ पटेल की हत्या कर देती है। मुंबई की सेठानियां किस प्रकार स्वच्छंद कामुकता के लिए रामा जैसे नौकरों से अपनी शारीरिक भूख को पूरा करती हैं, लेखक ने उपन्यास के माध्यम से इस यथार्थ को चित्रित किया है – "घर की नौकरी ऐसी होती है। गरीबों के लड़कों के लिए हर जगह गड्ढे हैं, दोस्त। जुठे बर्तन भी घीसो दिन भर, फिर रात को बीवियों को भी संभालो, बीमार पड़के मर जाओ, तो कुत्ता भी सुँघने को नहीं भेजेगा कोई।"[5]

महानगरों में रामा जैसे नौकरों से सेठानियां अपनी हवस मिटाती हैं और उधर उनके पति दूसरी स्त्रियों से संबंध कायम करते हैं, यही आज के भौतिकवादी समाज की वास्तविकता है। महानगरों में अंध मानसिकता को पाश्चात्य संस्कृति ने बढ़ावा दिया है। मुक्त यौन संबंधों की बढ़ती मानसिकता ने स्त्री–पुरुष दोनों को पतित बना दिया है।

काशीनाथ सिंह का उपन्यास 'रेहन पर रग्घू' वर्तमान समय में टूटते मानवीय संबंधों एवं बदलते जीवन मूल्यों को पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करता है। उपन्यास में बाजारवादी सभ्यता में अकेले पड़ रहे मनुष्य की जिन्दगी

को रेखांकित किया है। उपन्यास की कथा रघुनाथ नामक पात्र के जीवन के इर्द–गिर्द बुनी गयी है। उपन्यास की शुरुआत इस प्रकार होती है – "घर के सारे खुले खिड़की दरवाजे भड़–भड़ करते हुए अपने आप बन्द होने लगे, खुलने लगे। सिटकनी छिटक कर कहीं गिरी, ब्यौड़े कहीं गिरे जैसे धरती हिल उठी हो, दीवारें काँपने लगी हो। आसमान काला पड़ गया और चारों ओर घुप्प अंधेरा..... इकहत्तर साल के बुड्ढे रघुनाथ भौचंक। यह अचानक क्या हो गया? क्या हो रहा है?"[6] मौसम का यह घुप्प अंधेरा जहां एक तरफ वातावरणीय परिदृश्य को दर्शाता है तो वहीं साथ ही बुड्ढे रघुनाथ के जीवन को भी। रघुनाथ की भौंचकता सिर्फ मौसम को लेकर नहीं है बल्कि अपने जीवन में आए उन बदलावों को लेकर हैं जो न चाहते हुए भी एक–एक करके उनके सभी मूल्यों को तहस–नहस कर देते हैं। उनका बड़ा बेटा संजय अपनी मर्जी से विवाह करता है और अमेरिका में जाकर बस जाता है। छोटा लड़का भी एक बच्चे की मां के साथ 'लिव इन' में रहता है। लड़की सरला भी अपनी जाति से निचली जाति के युवक से शादी करना चाहती है।

इस तरह रघुनाथ का पूरा परिवार टूट जाता है और अकेलेपन का शिकार हुए रघुनाथ अपनी पत्नी शीला से कहता है – "शीला, हमारे तीन बच्चे हैं लेकिन पता नहीं क्यों कभी–कभी मेरे भीतर ऐसी हूक उठती है जैसे लगता है मेरी औरत बाँझ है और मैं निःसन्तान पिता हूं। माँ और पिता होने का सुख नहीं जाना हमने। हमने न बेटे की शादी देखी, न बेटी की। न बहू देखी न होने वाला दामाद देखा।"[7] 'रेहन पर रग्घू' वर्तमान मानवीय जीवन की महागाथा का उपन्यास है। उपन्यास में सिर्फ रघुनाथ के जीवन सत्य को उद्घाटित नहीं किया गया बल्कि मध्यवर्गीय हर उस व्यक्ति के जीवन का चित्रण है जो वैश्वीकरण के चलते स्वयं को अकेला महसूस करता है। लेखक ने वैश्वीकरण के परिणामस्वरुप टूटते मानवीय संबंधों एवं बदलते जीवन मूल्यों को रेखांकित करने के साथ–साथ प्रश्नांकित भी किया है।

आधुनिक सभ्यता ने मनुष्य को स्वार्थी, आत्मकेंद्रित तथा व्यक्तिवादी बना दिया है, परिणामस्वरुप भौतिकता और विलासिता की दौड़ में वह मानवीय मूल्यों से विमुख हो गया है। ऐसी स्थिति में नैतिकता और अनैतिकता, आदर्श व यथार्थ में संघर्ष होना स्वाभाविक है। इस संघर्ष के कारण कुंठा, निराशा, अवसाद, एकाकीपन का विकास हुआ है और मनुष्य मानसिक रूप से भी टूट चुका है और विकृत मानसिकता का शिकार हो गया है।

सोना चौधरी द्वारा रचित उपन्यास 'पायदान' विकृत मानसिकता का अच्छा उदाहरण है। उपन्यास की पात्रा अपने ही चाचा द्वारा बलात्कार का शिकार होती है। "जिस तरह कोई जानवर मांस का टुकड़ा नहीं छोड़ना फिर चाहे वह उसी के बच्चे का हो, उसी तरह मेरे चाचा ने मुझे नोचा था..... दिन में कई बार सब खेत पर चले जाते तो चाचा मौके का फायदा उठाता और हम दोनों में से जो मिल जाता उसे ही घेर लेता। उस समय हम पहली–दूसरी कक्षा में पढ़ते थे, अंदर ही अंदर मुझे अपने से नफरत सी होती। कक्षा में बैठे सब बच्चे पढ़ रहे होते लेकिन मैं रात की बातें सोचकर डरती और आने वाली रात का भय भी दबोचता।"[8]

वैश्वीकरण के दौर में परिस्थितियाँ बदल गई हैं, उपभोग की मानसिकता में वृद्धि हो गई है। भौतिक एवं शारीरिक सुख प्रदान मानसिकता के कारण परिवार टूट रहे हैं, प्रेम जैसे उदात्त मूल्य मरनासन्न अवस्था में पड़े हैं। वासना के बढ़ते प्रभाव ने मनुष्य को नीच, घृणित, चरित्रहीन, व्यभिचारी एवं पशु बना दिया है। पति–पत्नी के बीच का विश्वास, समर्पण, सेवा एवं त्याग, भाव समाप्त हो रहा है। प्रेम के बदलते स्वरूप का चित्रण मनमोहन सहगल ने उपन्यास 'समझौते से पहले' में किया है। उपन्यास में बदलते जीवन मूल्यों में खोखले रिश्तों का स्वर

सुनाई देता है, पात्र प्रमोद विवाह को एक शारीरिक आकर्षण मानता है। प्रमोद सोच रहा था– "अरुणा के संयोग में आनंद था, रस था। काश, यह ऐसा ही बना रह सके जीवन साथी के तौर पर भी तो बुरी नहीं। पी.एच.डी हो रही है परिवार में बराबर का धनार्जन करेगी। उसका समर्पण ही उसके मेरे प्रति प्रेम की गवाही देता है। परंतु माता–पिता की जिद पूरी हुई और मुझे भट्टी परिवार की इकलौती वारिस जूही से विवाह कर अमेरिका में करोड़ों का बिजनेस संभालना पड़ा।..... आगे प्रमोद का दिमाग जड़वत हो गया वह बैठा–बैठा एक बार कांपा और फिर अपने आप से समझौता सा करता हुआ स्वतः कह उठा, जूही भी सुंदर है, फिर करोड़ो की सामी, जिन्दगी गुलाबों की सेज बन रही हो तो कांटों की सोच ही क्यों? अरुणा का स्वाद अतिरिक्त सही।"[9] प्रमोद के चेहरे पर कपट और कूटनीति की रेखा खींच गई। लेखक ने भौतिकवादी जीवन परिदृश्य में बदलते जीवन मूल्यों को चित्रित कर मानवता की अर्थवत्ता को स्पष्ट करने का सार्थक प्रयास किया है।

वैश्वीकरण के दौर में दुनिया में एक ओर चीज तेजी से फैली है वह है–'प्लास्टिक मनी'। अब 'क्रेडिट कार्ड्स' का जमाना है। इसने एक ओर व्यक्ति के जीवन को सुविधायुक्त बनाया है तो दूसरी ओर बिना पैसे के मौजमस्ती की लत भी पैदा कर दी है। यदि आपके पास पैसा नहीं है तो आप क्रेडिट कार्ड का इस्तेमाल कर अपनी इच्छाओं की पूर्ति कर सकते हैं। क्रेडिट कार्ड ने संयम की परिभाषा को बदल दिया है, और बाजारवादी सोच ने संयम को दमन के रूप में प्रचारित किया। प्रदीप सौरभ ने 'मुन्नी मोबाइल' उपन्यास में अमेरिकी और भारतीय विचारधारा की तुलना की है। प्रदीप सौरभ लिखते हैं – "एक अमेरिकन के पास औसतन पन्द्रह क्रेडिट कार्ड होते हैं। उनके या किसी बुजुर्ग की मौत पर विरासत में परिवार वालों को क्रेडिट कार्ड्स और दूसरे लोगों के बिल मिलते हैं। भारत में ऐसी स्थिति में परिवार वालों को मकान, सोना–चांदी ओर भी बहुत कुछ मिलता है। भारत में ऐसा भी दर्शन है कि उधार लेकर भी पिओ।"[10] भारत में प्राचीन काल से ही संयमपूर्ण जीवन बिताने की आदत रही है। लेकिन क्रेडिट कार्ड आज के आदमी को उपभोग के लिए उकसाता है और भोगवाद का असर भारतीय संस्कृति में भी दिखाई देना शुरू हो गया है।

निष्कर्षतः कह सकते हैं कि वर्तमान समाज भौतिकवाद के रंग में रंगा हुआ है, जिसमें मूल्यों के स्थान पर अर्थ की प्रधानता है। मानव अपने नैतिक मूल्यों को खोकर अनैतिक तत्वों की ओर प्रोत्साहित हो रहा है। आज अर्थ के आगे सभी रिश्ते झूठे और बेमानी हो गए हैं। सामाजिक परिदृश्य के बदलते स्वरुप में दया, करुणा, प्रेम, भाईचारा, एकता और नैतिकता का अर्थ ही कहीं खो–सा गया है। आज टीवी, इलेक्ट्रॉनिक मीडिया और प्रौद्योगिकी के विकास ने मानवीय संवेदनाओं को अत्यधिक प्रभावित किया है। आज का मनुष्य बहुत कम समय में बहुत ज्यादा पा लेना चाहता है, जिस कारण वह मानसिक तनाव का शिकार होता जा रहा है। इस प्रकार ये सभी सामाजिक पहलू सामाजिक चेतना के साथ–साथ सभ्यता, संस्कृति और जीवन मूल्यों को भी प्रभावित करते हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. दाढे, डॉ. वीणा – समसामयिक साहित्य चिंतन और चुनौतियां, अमन प्रकाशन कानपुर, प्रथम संस्करण 2015, पृ. 152
2. उपन्यास की समकालीनता, ज्योतिष जोशी, पृ. 15

3. आखिरी दांव, भगवतीशरण वर्मा, पृ. 126
4. समकालीन हिन्दी उपन्यास, महानगरीय बोध, सीमा गुप्ता, पृ. 51
5. कबूतरनामा, शैलेश मटियानी, पृ. 131
6. रेहन पर रग्घू, काशीनाथ सिहं, राजकमल प्रकाशन, प्रथम संस्करण 2010, पृ. 11
7. वही, पृ. 89
8. पायदान, सोना चौधरी, पृ. 14
9. समझौते से पहले, मनमोहन सहगल, पृ. 14
10. मुन्नी मोबाईल, प्रदीप सौरभ, पृ. 104